बदलते परिवेश में बैगा जनजाति की गोदना परंपराएँ

अनिल कुमार पाण्डेय

सारांश :- **गोदना कला सिर्फ आदिवासी जनजातीय समुदाय में ही नहीं बल्कि अन्य जातियों में भी व्यापक रूप से प्रचलित है। भारत के विभिन्न प्रदेशों में रहनेवाले अनेक जनजातीय समुदायों सहित हिन्दू समाज में गोदना कला प्राचीनकाल से ही प्रचलित है। जनजातीय लोक-संस्कृति में गोदना कला का अत्यंत महत्व है। अंधविश्ववासों से उपजी इस कला का रूप, पुरातन मान्यताएं वर्तमान में भी बरकरार हैं, जिनका विवरण हमें मिथकों, प्रतीकों, किंवदंतियों, लोकगीतों, किस्से-कहानियों में, खासकर ग्रामीण जनजातीय समुदाय में देखने और सुनने को मिलता है। बैगा जनजाति दुनिया की सर्वाधिक गोदना प्रिय जनजातियों में से एक है। बैगा स्त्रियाँ गोदना को स्वर्गिक अलंकरण मानती हैं। बैगाओं में गोदना कला को धार्मिक, सामाजिक मान्यता प्राप्त है। वर्तमान में बदलते सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक परिवेश के चलते बैगा समुदाय में गोदना कला के प्रति पहले जैसा उत्साह नहीं है। आज गोदना तकनीक और गोदना के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले रंगों में अनेक बदलाव आए हैं। बैगा जनजातीय समुदाय में गोदना न केवल संस्कार है बल्कि उनकी कला की भी थाती है, जिनका संरक्षण करना आवश्यक है।**

महत्वपूर्ण शब्द :- बैगा जनजाति, गोदना कला, परंपरागत संचार

परिचय

भारत के विभिन्न समुदायों में कला की कई परंपराएं प्राचीनकाल से ही पल्लवित-पुष्पित, संवर्धित और संरक्षित होती आयी हैं। जातीय तथा जनजातीय समुदाय की यह परंपराएं आकर्षक, मनमोहक तथा विविधताओं से भरी हैं। लोक-संस्कृति के प्रतीक के साथ ही कला के मनमोहक रूप में गोदना कला का भारतीय संस्कृति में अपना विशिष्ट महत्व है। देश के ग्रामीण अंचलों में आज भी महिलाएं अपने पति का नाम नहीं लेती हैं इसी वजह से वे पति का नाम अपने हाथ पर गुदवाकर अपने मधुर संबंधों और भावनाओं का प्रदर्शन करती हैं। गोदना जनजातीय समुदाय में एक सामाजिक प्रथा की तरह है। जनजातीय समुदाय की महिलाएं गोदना बड़ी ही ललक के साथ गुदवाती हैं। जनजातीय समुदाय में जिन महिलाओं के शरीर में गोदना नहीं होता है उन्हें समुदाय में हेयदृष्टि से देखा जाता है। यही वजह है कि गोदना परंपरा पीढ़ी दर पीढ़ी प्रसारित हो रही है। जनजातीय समुदाय में ऐसी मान्यता है मृत्यु के बाद भौतिक जगत के समस्त वस्त्र, आभूषण यहीं छूट जाते हैं जबकि गोदना आत्मा के साथ स्वर्ग तक जाता है। गोदने में निहित जादू तथा पराशक्ति पर विश्वास भी जनजातीय समुदाय में गोदना गुदवाने को प्रेरित करता है। गोदना को लेकर कई मान्यताएं हैं। सामाजिक, आर्थिक आस्थाओं के अतिरिक्त गोदना की एक मान्यता यौन भावना को जागृत करने और अंलकरणों के रूप में शारीरिक सौन्दर्य में अभिवृद्धि करने से भी संबंधित है।

भारत देश में चित्रकला की अत्यंत ही गौरवशाली परंपरा रही है जो भारत के गौरवमयी इतिहास को विशिष्टता प्रदान करती है। इतिहासकारों का मानना है कि इतिहास लिखे जाने से पहले इस कला ने इतिहास रचना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। गोदना कला भी इसी गौरवशाली परंपरा में अभिन्न रूप से सन्निहित एक अनुपम कला है। विभिन्न तरीकों, साधनों व उपायों से अपने शरीर को सजाना और संवारना मनुष्य की सदैव से ही सहज प्रवृत्ति रही है। डॉ. श्यामाचरण दुबे ने अपनी पुस्तक 'मानव और संस्कृति' में लिखा है कि- "आदिकाल से ही मानव प्रकृति के सामान्य रूप से संतुष्ट नहीं रहा है। सौन्दर्यवृद्धि तथा सौन्दर्य-दृष्टि की ओर नैसर्गिक रूप से उसकी प्रवृत्ति रही है।"[1] मानवीय इतिहास में शायद ही कोई मनुष्य या समुदाय हो जो प्राकृतिक एवम् मानवीय संबंधों से अलग - थलग रहा हो। वहीं कोई भी चिंतन समाज का परोक्ष या अप्रत्यक्ष आकलन किए बिना प्रकट नहीं हो सकता। "सौन्दर्य के

❐ **पीएच. डी. शोधार्थी, लोक शिक्षा एवं जनसंचार विभाग, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट सतना, (म.प्र.)**

प्रति मानव का रुझान अत्यंत प्राचीन है.....मानव कला के बिना जीवित रह सकता है, परन्तु संसार के प्रत्येक भाग में उसने कला का कोई न कोई रूप नृत्य, संगीत, चित्रण, स्थापत्य - अवश्य ही विकसित किया है। मानव की कलात्मक चेतना के शारीरिक और मानसिक आधार का विश्लेषण संतोषजनक रूप में अभी तक नहीं हुआ है। इस प्रकार के विश्लेषण के अभाव में केवल यही कहा जा सकता है कि अपनी अन्तश्चेतना की कतिपय उलझनों और तनावों को दूर करने के लिए ही कला की सृष्टि करता है।"[2] संभव है गोदना कला भी इन्हीं उलझनों और तनावों को दूर करने तथा मनुष्यों को सजा-संवार कर सुंदर दिखाने की कला के रूप में अवतरित हुई हो। सही मायनों में "गोदना की प्रथा हमारी परंपराओं की देन है। साथ ही लोक -माध्यम भी। गोदना गीत भी प्रचलित है। स्त्री के हाथ, नाक, ललाट, पैर या अन्य भागों में गोदे गये गोदना से उसके शादीशुदा होने का प्रमाण तो मिलता ही है, साथ ही क्षेत्र विशेष और अन्य संस्कृतियों व कलाओं का ज्ञान भी होता है।"[3]

गोदना को लेकर जनजातीय समुदाय में अनेक मिथक एवम् सामाजिक मान्यताएं जुड़ी हुई हैं। कई शोध अध्ययनों से पता चलता है कि जनजातीय समुदाय के लोग अपनी इच्छानुसार शरीर के विभिन्न हिस्सों पर प्राकृतिक तरीके से गोदना करवाते हैं। कुछ जनजातीय समुदायों में मान्यता है कि जिन समुदायों की महिलाएं अपने शरीर पर गोत्रचिन्ह के रूप में गोदना गुदवाती हैं उनके पूर्वजों की मृतआत्माएं उनकी रक्षा करती हैं। इसी तरह जो महिलाएं अपने दाहिने कंधे और छाती में किसी देवी-देवताओं के प्रतीक गुदवाती हैं उन्हें कभी भी किसी तरह की समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता। मिथकों के अनुसार जो महिलाएं पैरों में गोदना गुदवाती है उन्हें स्वर्ग की सीढ़ियां चढ़ने में परेशानी नहीं होती वहीं अपने घुटनों पर गोदना गुदवाने वाली महिलाओं में घोड़े जैसी शक्ति होती है। गोंड जनजाति गोदना को काले कुत्ते की तरह मानती है। काले कुत्ते को जिस तरह से समाज बहुत अशुभ मानता है और उसे कोई नहीं चुराता। ठीक उसी तरह जिस शरीर में गोदना का चिन्ह है, उसे कोई नहीं चुरायेगा। गोंड जानजाति के लोगों में यह मान्यता भी है कि जो बच्चा चल नहीं सकता या फिर चलने में कमजोर है, उसकी जाँघ के आसपास गोदना गुदवाने से वह न सिर्फ चलने लगेगा, बल्कि दौड़ना भी आरम्भ कर देगा। भीलों में भी यह मान्यता है कि गोदना के कारण शरीर बीमारियों से बच जाता है और मनुष्य स्वस्थ रहता है।

चित्रकला से विकसित हुई "गोदना कला सही मायने में एक अभिव्यक्ति है जो जातीय चिन्हों के रूप में व्यक्ति को सुरक्षा भाव से संपृक्त करती है। हर व्यक्ति अपने समुदाय से जुड़ा रहना चाहता है। गोदना उसे विश्वास से बांधता है।.....बिना किसी परिवर्तन के अपने आरंभिक रूप से चले आ रहे कुछ चिन्ह इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं। उदाहरणस्वरूप नयना और बिच्छू नामक गोदना केवल भीलों में ही मिलते हैं।"[4]

इस तरह गोदना कला न केवल महिलाओं की सौन्दर्यवृद्धि में सहायक है बल्कि उनकी सामुदायिक पहचान को भी कायम रखता है। गोदना कला के प्रति अप्रतिम प्रेम के चलते विश्व की आदिमतम जनजातियों में एक बैगा जनजाति की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक समृद्धता बिना गोदना के अधूरी है। प्रस्तुत शोधपत्र में बैगा जनजाति समुदाय में प्रचलित गोदना परंपराओं के साथ ही जनजातीय समुदाय में प्रचलित गोदना कलाओं की प्रक्रिया एवं प्रकारों का विस्तार से वर्णन एवं विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र निम्नलिखित उद्देश्यों पर आधारित है ।

- बदलते परिवेश में बैगा जनजाति की गोदना परंपराओं का अध्ययन करना।
- गोदना कला की प्रक्रिया तथा बैगा जनजाति में उसके स्वरूपों का अध्ययन करना।

अध्ययन की शोध विधि

प्रस्तुत शोधपत्र 'बदलते परिवेश में बैगा जनजाति की गोदना परंपराएं' में बैगा जनजाति की गोदना परंपराओं की प्रक्रिया एवं प्रकार सहित बदलते परिवेश का गोदना परंपराओं पर पड़नेवाले प्रभाव से संबंधित तथ्यों को प्रथमतः द्वितीयक आंकड़ों जैसे बैगा जनजाति से संबंधित पुस्तकों, लेखों, इत्यादि से एकत्रित किया गया है, साथ ही जनजाति से संबधित अन्य तथ्य शोध क्षेत्र 'बैगाचक' का भ्रमण कर किए गए असहभागी अवलोकन एवं जनजाति के लोगों तथा विषय विशेषज्ञों के अनौपचारिक साक्षात्कार पर आधारित है ।

तथ्य संकलन

फेयर चाइल्ड ने तथ्यों के संबंध में कहा है कि- "कोई प्रदर्शित करने या प्रकाशित करने योग्य वास्तविकता का मद, पद या विषय ही तथ्य है।" इसका संबंध एक वास्तविक घटना से होता है। इसमें शोधकर्ता का ज्ञान एवं अनुभव विस्तृत होता है। तथ्यों का

बोध अनुभव के द्वारा ही होता है। इस शोधपत्र में मुख्यतः द्वितीयक स्त्रोंतों पर आधारित तथ्यों का उपयोग किया गया है।

बैगा जनजातिः परिचयात्मक संदर्भ

मानवजाति को रंग, रूप, आकार, शारीरिक बनावट और विशेषताओं के आधार पर अनेक समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है। इन वर्गीकृत समूहों को प्रजाति के नाम से जाना जाता है। वर्तमान भारतीय समाज अनेक प्रजातियों का सम्मिलित रूप है। ऐतिहासिक एवं आर्थिक-सामाजिक प्रभावों ने देश की अधिसंख्य जनसंख्या को बाह्य और सीमित दशाओं में एकरुपता प्रदान की है, लेकिन भारत की जनसंख्या का एक भाग इन प्रभावों से अपेक्षाकृत अप्रभावित रहा है, इस भाग के अन्तर्गत भारत के प्राचीनतम निवासियों के वंशजों के छोटे - बड़े समूह आते हैं, जो आज भी संस्कृति एवं विकास के आरम्भिक धरातल पर जीवनयापन कर रहे हैं। वर्तमान में इनके वंशजों के छोटे-बड़े समूहों को ही आदिवासी एवं जनजाति के नाम से जाना जाता है। जनजातियां भारत की वह स्थानीय मानव प्रजातियां है, जिसकी भारतीय संस्कृति के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका है। जनगणना 2011 के अनुसार भारत में आदिवासियों की जनसंख्या कुल जनसंख्या का 8.6 फीसदी है। वर्तमान में देश में 425 से अधिक जनजातियां निवासरत हैं। मानवशास्त्रियों का मत है कि "आदिवासियों के अधिकांश समूह नीग्रिटो और प्रोटोआस्ट्रेलॉयड अथवा मंगोलॉयड प्रजातियों के वंशज हैं।"[5] भौगोलिक दृष्टि से आदिवासियों के समूहों को चार प्रमुख भागों में बांटा जा सकता है इनमें उत्तर और उत्तर पूर्वक्षेत्र, मुख्यक्षेत्र, पश्चिम क्षेत्र एवं दक्षिण क्षेत्र शामिल हैं। इनमें जनजातीय जनसंख्या की दृष्टि से मध्य क्षेत्र अत्यधिक ही महत्वपूर्ण है। इनमें बिहार के संथाल, मुण्डा, उरांव और बिरहोर, उत्कल के बोंदो, खोंड, सवरा, जुआड़ा तथा मध्यप्रदेश के गोंड, बैगा, कोरकू, कमार, भुजिया आदिवासी आदि शामिल हैं। "बैगा छोटा नागपुर की आदिम जनजाति भुइयां की मध्यप्रदेशीय शाखा है। बाद में इन्हें भूमिया बैगा कहा जाने लगा।....इस संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता की भुइयां की इस शाखा ने सबसे पहले छोटा नागपुर के रास्ते सर्वप्रथम छत्तीसगढ़ में प्रवेश किया हो।"[6] तत्पश्चात ये मध्यप्रदेश के मंडला, डिंडौरी, शहडोल, अनूपपुर, उमरिया, बालाघाट जिलों में निवास करने लगे। बैगा शारीरिक बनावट के हिसाब से श्यामवर्णीय, गठीले व हृष्ट-पुष्ट होते हैं। इनकी नाक चपटी व ललाट चौड़े होते हैं। बैगा औसत कद काठी के होते हैं। बैगा मध्यप्रदेश की विकास की दृष्टि से अत्यंत पिछड़ी जनजातियों में से एक है, साथ ही अपनी आदिमता के अंतिम पड़ाव में है। बैगा परम्परा से सामूहिक जीवन जीने के आदी हैं। बैगाओं की सामाजिक संरचना आंतरिक रूप से अत्यंत ही सुव्यवस्थित एवं संगठित है। बैगा समाज पुरुष प्रधान है, लेकिन आदिम बैगा समाज आन्तरिक रूप से स्त्रियों को अन्य विकसित समाजों की तुलना में अधिक स्वायत्तता, स्वच्छंदता एवं स्वतंत्रता प्रदान करता है। वहीं इनकी राजनैतिक व्यवस्था पंचायत आधारित होती है। पंचों द्वारा दिया गया निर्णय ही सर्वमान्य होता है। किसी भी समाज की आर्थिक व्यवस्था समाज का महत्वपूर्ण अंग होती है, लेकिन इस मामले में बैगा अत्यंत ही पिछड़े हैं। बैगा समाज में खेतीबाड़ी, घरेलू धंधे, पशुपालन, मजदूरी इत्यादि इनकी आर्थिक गतिविधियों का मुख्य आधार है। बैगा परम्परागत खेती करने में विश्वास करते हैं।

बैगा जनजाति की परम्परागत संचार परम्पराएं अत्यंत ही समृद्ध एवं चिरकालिक है। परंपरागत संचार की प्रकृति सहज एवं सरल होती है। परंपरागत संचार नैसर्गिक तथा स्वतः स्फूर्त होता है। परंपरागत संचार पारंपरिक विरासत के रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्वमेव स्थानातंरित हो जाता है। परंपरागत संचार बैगा जनजातीय समुदाय में लोकगीत, लोकनाट्य, लोककथा, गोदना, मेंहदी, मूर्तिकला, अल्पना, भित्ति-चित्रण, चित्रकला के रूप में व्याप्त है और इन्हीं परंपरागत संचार विधाओं में बैगा जनजाति की संस्कृति के इन्द्रधनुषी रंग समाहित हैं। बैगा जनजाति संचार या संदेशों के संप्रेषण के लिए कई माध्यमों का उपयोग करते हैं। एक तरह से बैगाओं की सम्पूर्ण जीवनप्रक्रिया ही संवाद करती हुई दिखायी पड़ती है, चाहे उनके धार्मिक विश्वास हों या फिर विवाह हो या जन्म-मृत्यु संस्कार सभी के सभी बैगाओं की पुरातन जीवनचर्या कों संप्रेषित करते हैं। बैगाओं का शायद ही ऐसा कोई क्रियाकलाप होगा, जिसमें संचार न हों। बैगाओं में संचार के तीन प्रारूपों, अंतर वैयक्तिक, अन्तर अंतरवैयक्तिक, समूह संचार दृष्टिगत होते हैं हांलाकि समय के साथ इनकी संचार प्रक्रियाओं में अंतर आया है। चाहे ये अंतर भाषागत हो या फिर सांस्कृतिक - सामाजिक बदलाव के कारण हो। 2001 की जनगणना के आंकड़ों के आधार पर ये जनजाति अपने मूलस्थानों से स्थानांतरित होकर प्रदेश के लगभग आधे जिलों में पहुंच चुकी है, यानी ये अपने मूल स्थान से अलग हो रहे हैं। स्वाभाविक है ये खुद को एक नए आर्थिक सामाजिक परिवेश में ढालने की जद्दोजहद में लगे हैं। बैगा जनजाति के लोग जैसे-जैसे दुर्गम पहाड़ों, उपत्काओं से बाहर आते गए, उनपर पर-संस्कृतिग्रहण का प्रभाव पड़ता गया, साथ ही कई समस्याओं और बदलते परिवेश में खुद को समन्वित करने के चलते खुद की

जाति के प्रति हीनता का भाव पैदा हुआ, अनैतिकता ने जन्म लिया, आर्थिक विषमता ने घर कर लिया, सामाजिक नियंत्रण ढीला हुआ। इसके अलावा पर-संस्कृति संपर्क का एक दुष्परिणाम बीमारियों में वृद्धि भी रहा है। वर्तमान समय जनमाध्यमों का है। प्रत्यक्ष संवाद का स्थान तकनीकी ने ले लिया है। आज जनमाध्यमों के प्रभावों से कोई अछूता नहीं है। बैगा समुदाय भी जनमाध्यमों के प्रभाव से खुद को बचा नहीं पाया है। बावजूद इन सबके बैगा जनजातीय समुदाय अभी भी अपनी परंपरागत विरासत को संजोए हुये है। ये बात सत्य है कि इनमें क्षरण दृष्टिगोचर हुआ है। वर्तमान में तेजी से बदलते परिवेश के बावजूद परम्परागत लोक माध्यमों की अपनी एक अलग पहचान है। आज भी ये परंपराएं किसी न किसी रूप में अनवरत रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी जारी हैं।

जनजातीय समुदाय में गोदना परंपराएं

इस बात का कोई पुख्ता प्रमाण नहीं हैं कि गोदना कला का प्रारंभ कब हुआ? हालांकि कुछ समाजशास्त्रियों का मानना है कि गोदना परंपरा की शुरूआत मानव सभ्यता के शुरूआत से हुई है। समाजशास्त्री हर्बर्ट स्पेंसर का मानना है कि- "गोदना परम्परा का आरंभ आत्माओं को रक्त चढ़ाए जाने से हुआ होगा" वहीं समाजशास्त्री एम. डब्ल्यू. एलिस के अनुसार "गोदने की उत्पत्ति के लिए किसी भी तथ्य पर पहुँचना असंभव है।" गोदना न केवल जनजातीय समाज में बल्कि हर देश की परम्पराओं का अभिन्न हिस्सा है। गोदना परंपरा की शुरूआत के संबंध में अनेक किस्से कहानियां समाज में प्रचलित हैं। इस परंपरा का अनुमान प्राचीन साहित्य, कला, प्राचीन प्रथाओं-परंपराओं के अध्ययन से उपस्थित व उसके उपलब्ध विवरणों से लगाया जा सकता है। अंधविश्ववासों से उपजी इस कला का रूप, पुरातन मान्यताएं वर्तमान में भी बरकरार हैं, जिनका विवरण हमें मिथकों, प्रतीकों, किंवदंतियों, लोकगीतों, किस्से-कहानियों में खासकर ग्रामीण जनजातीय समुदाय में देखने और सुनने को मिलता है। "गोदना कला के प्रमाण सबसे पहले 1300 ई.पू. मिस्र में प्राप्त हुए थे। तत्पश्चात 300 ई. में साइबेरिया के कब्रिस्तान में भी गोदनाकला के प्रमाण मिले हैं। ऐडमिरैस्टी द्वीप में रहनेवाले, फिजी निवासियों, भारत के गोंड एवं टोडो, ल्यू क्यू द्वीप के बाशिंदों और अन्य कई जातियों में रंगीन गोदना गुदवाने की प्रथा केवल स्त्रियों तक सीमित है वहीं.... सालामन द्वीप में लड़कियों का विवाह तब तक नहीं हो पाता जब तक कि उनके चेहरों और वक्षस्थलों पर गोदना न गुदवा दिए जाएँ। आस्ट्रेलिया के आदिवासियों में विवाह से पूर्व लड़कियों की पीठ पर क्षतचिह्नों का होना अनिवार्य है। फारमोसा निवासियों में विवाह से पहले लड़कियों के चेहरों पर गोदने गुदवाए जाते हैं वहीं न्यूगिनी के पापुअन विवाह से पूर्व लड़कियों के पूरे शरीर पर (मुँह को छोड़कर) गोदना गुदवाना अनिवार्य है।"[7]

भील जनजाति के लोगों की मान्यता है कि गोदना से शरीर को कई बीमारियों से मुक्ति मिल जाती है। वहीं गोंड जनजाति की मान्यता है कि इसे कोई चुरा नहीं सकता। बैगा जनजातीय समुदाय की स्त्रियां गोदना गुदवाने को अपना धर्म मानती हैं। जो बैगा स्त्री अपने शरीर पर गोदना गुदवाती है, उसका मान समाज में बढ़ जाता है। बैगा समुदाय में लड़कियों के शरीर में गोदना करीब आठ साल की उम्र में ही प्रारम्भ हो जाता है। शादी के बाद बैगा स्त्रियों में गोदना गुदवाना उचित नहीं माना जाता है। गोदने को लेकर बैगा जनजाति में एक लोककथा भी सुनने को प्रायः मिलती है। इस कथा के अनुसार एक राजा था जो अत्यंत ही कामुक प्रवृत्ति का था। उसे हर रात्रि एक नई युवती चाहिए होती थी। एक बार वह जिस युवती से संसर्ग कर लेता था, वह उसके शरीर पर गोदने की सुई से निशान बना देता था। अंततः उस राजा से अपने को बचाने के लिए बैगा जनजाति की महिलाओं ने अपने शरीर पर गोदना करवाना शुरू कर दिया। बाद में यही देहकला विस्तृत होने के साथ ही बैगा समाज की पहचान बन गई।

विभिन्न जनजातीय समुदायों में गोदना गुदवाने का ढ़ंग अलग अलग होता है। कुछ जनजातियों में विशेष चिन्ह गुदवाये जाते हैं जो जाति विशेष की अलग पहचान बन जाते हैं। जैसे उरांव गोदना, गोंड गोदना। इस तरह का गोदना विशेष चिन्हों, आकृतियों, गोत्र चिन्हों के आधार पर विभक्त होते हैं। उरांव जनजाति के गोदना की विशेषता है माथे और कनपटी पर तीन रेखाओं वाला गोदना। वहीं गोंड जनजाति की महिलाएं तारे, परस्पर काटती हुई सीधी रेखायें, मानव और पशु- पक्षियों की प्रतीक आकृतियां पंसद करती है। भूमिया जनजाति की स्त्रियां सीधी और वक्र रेखाओं की शौकीन होती हैं। कंवर जनजाति की महिलाएं पहले करेला चानी फिर सिकरी फिर लवंग फूल उसके ऊपर थाम्हा खूरा और सबसे ऊपर सादा हाथी गोदा जाता है। जबकि रजवार जनजाति की स्त्रियों में पैर और बांहों पर हाथी का प्रतीकात्मक गोदना गुदवाने की परंपरा है। बैगा जनजाति की स्त्रियां अपने संपूर्ण शरीर में ही गोदना गुदवाती है। इस प्रकार जनजातीय समुदायों के गोदना के प्रकारों, गोत्र चिन्हों के आधार पर जाति विशेष की महिलाओं की

पहचान गोदना कला के आरेखन से की जा सकती है। इस तरह गोदना जनजाति समुदाय में सौन्दर्य वृद्धि के साथ ही पहचान भी देता है।

बैगा जनजाति में गोदना की प्रक्रिया

बैगा जनजाति में गोदने के लिए एक विशेष प्रकार की स्याही का इस्तेमाल किया जाता है। "इस स्याही को बनाने के लिए सबसे पहले काले तिलों को अच्छी तरह भूना जाता है और फिर उसका लौंदा बनाकर जलाया जाता है। जलने के बाद प्राप्त स्याही जमा कर ली जाती है। इसके साथ ही गोदने में इस्तेमाल होने वाले रंगों के लिए बैगा जनजाति के लोग पलाश के फूल, वृक्षों की छाल तथा अन्य उत्कृष्ट फूलों को सुखाकर स्याही तैयार करते हैं।"[8] स्याही बनाने के बाद इसे पानी में घोल लिया जाता है तत्पश्चात गोदना बनाने की प्रक्रिया शुरू होती है और इसी स्याही से बदनिन एक विशेष प्रकार की सुई से शरीर पर मनचाही आकृति और चिन्ह गोदती है। गोदना जिस उपकरण से बनाया जाता है उसे 'सुई' या 'सुवा' कहा जाता है। गोदना गोदने के लिए तीन या इससे अधिक 'सुवा' एक विशेष ढंग से आपस में बांधकर सरसों के तेल में चिकने किए जाते हैं। इन तीन सुईयों को जनजातीय समुदाय में 'फोसा' या 'चिमटी' कहा जाता है, वहीं गोदने के लिए स्याही बनाने की विधि को 'काजर बिठाना' कहते हैं। गोदना बनाने के पहले 'चीन्हा' बनाया जाता है जिसे 'लिखना' भी कहते हैं। बांस की पलती सींक या झाड़ू की तीली की मदद से गोदना कराने वाले के शरीर पर विशेष आकृति बनाई जाती है। बाद में इन्हीं आकृतियों पर 'फोसा' की मदद से गोदना किया जाता है। गोदना होने पर स्याही से डूबी जखनादार सुई से उसमें रंग भर दिया जाता है।

गोदना के पश्चात गोदने के स्थान पर सूजन आ जाना स्वाभाविक है। सूजन को दूर करने के लिए गोबरपानी और सरसों का लेप लगाया जाता है। साथ ही इस बात का ध्यान रखा जाता है कि गोदना वाला स्थान ना पके इसलिए गोदने वाले स्थान पर हल्दी और सरसों का लेप लगाया जाता है। गोदने के सात दिन पश्चात गोदने वाले स्थान की त्वचा स्वमेव ही निकल जाती है साथ गोदनेवाले स्थान की सूजन भी खत्म हो जाती है। बैगा जनजाति समुदाय में गोदना गुदवाना वर्ष में कभी भी किया जा सकता है लेकिन गर्मियों के समय समुदाय गोदना गुदवाने से परहेज करता है क्योंकि इस समय गोदना के पकने की आशंका बनी रहती है।

गोदना प्रेमी बैगा महिलाएं

इस जनजाति की मौखिक-वाचिक परंपराएँ, लोक - नृत्य, लोकगीत तथा अन्य कला माध्यम विभिन्न रूपों में बिखरे पड़े हैं। गोदना बैगा जनजाति की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के साथ ही बैगा समाज के अंतरतम से जुड़ी हुई है। समुदाय में उस स्त्री को ज्यादा सम्मान मिलता है जिसके शरीर पर ज्यादा गोदना होता है। जिस स्त्री के शरीर पर गोदना नहीं होता समुदाय में उसका मायका गरीब माना जाता है। गोदना को लेकर बैगा जनजाति में सामाजिक धार्मिक मान्यता है कि मृत्यु के बाद व्यक्ति के साथ गोदना ही रह जाता है। "बैगा स्त्रियां गोदना को स्वर्गिक अंलकरण मानती हैं।.... इस जनजाति में शरीर अलंकरण के रूप में गोदने की एक दीर्घ परंपरा है। एक ऐसे अलंकरण के रूप में जो शरीर का स्थायी अंग बन जाता है।"[9] बैगा महिलाएं अपने देह के तमाम हिस्सों में गोदना करवाती हैं। बैगा जनजाति के कई पुरुष भी गोदना करवाते हैं। बैगा जनजाति दुनिया की इकलौती ऐसी जनजाति है जिसकी महिलाएं अपने सम्पूर्ण शरीर में गोदना करवाती हैं। बैगा जनजाति में गोदना पवित्रता के साथ ही स्त्री सौन्दर्य का भी प्रतीक है।

बैगा जनजाति की महिलाएं धातु के आभूषणों का उपयोग अत्यंत ही सीमित रूप में करती हैं, साथ ही बुनियादी वस्तुओं के अभाव में गोदना ही बैगा जनजाति की महिलाओं का मुख्य आभूषण होते हैं। आज भी गोदना बैगा जनजाति में लोकप्रिय है लेकिन समय के साथ बैगा महिलाओं में यह कम होता जा रहा है। बैगा जनजाति की वृद्ध महिलाओं की तुलना में गोदना समाज की कम उम्र की महिलाओं में अपेक्षाकृत कम देखने को मिल रहा है। बैगा समुदाय में यह परंपरा अब लगभग समाप्त होने की कगार पर है।

बैगा जनजाति में प्रचलित प्रमुख गोदना कलाएं

बैगा स्त्री गोदना गुदवाने को अपना धर्म मानती हैं। बैगा स्त्रियों में गोदना एक उम्र विशेष में करवाना आवश्यक माना जाता है। करीब आठ साल की उम्र में ही बैगा जनजाति की लड़कियों के शरीर में गोदना करना प्रारम्भ होता है। जिसे वे शादी के बाद भी गुदवाती रहती हैं। बैगा जनजाति समुदाय में जो स्त्री अपने शरीर पर ज्यादा गोदना गुदवाती हैं, उसका मान समाज में बढ़ जाता है। इस जनजाति में गोदना नहीं गुदवाना निर्धनता का प्रतीक माना जाता है। बैगा स्त्रियां अत्यंत ही कठिनतम भौगोलिक परिवेश में रहती हैं, साथ ही बैगा स्त्रियां अपनी शरीर पर कम वस्त्र पहनती हैं। लिहाजा गोदना उन्हें प्रतिकूल मौसमी परिस्थितियों में प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करता है। बैगा स्त्रियों में कई गोदना कलाएं प्रचलित हैं जिनमें विशेष प्रकार की कलाकृतियां तथा चिन्ह विशेष रूप से

उकेरे जाते हैं। बैगा जनजाति की स्त्रियां मुख्यतः कपाल, हाथ, पीठ, जांघ, छाती पर गोदना गुदवाती हैं। बैगा जनजाति में प्रचलित प्रमुख गोदना कलाएं निम्न प्रकार हैं-

पुखड़ा गोदाय-"बैगा जनजाति में गोदना संस्कार की तरह है। सोलह साल की उम्र में बैगा स्त्रियां पुखड़ा (पीठ) गुदवाती हैं। पीठ पर टिपका, सांकल, चकमक, बांह के पीछे-आगे टिपका, मछली कांटा, बेंडा, झेला के गुदना गोदे जाते हैं।"[10]

जांघ गोदाय- "इसमें जांघों के आगे वाले हिस्से में गोदना गुदवाया जाता है। जांघ में गोदना करवाना बैगा स्त्रियों में विवाह से पहले जरूरी माना जाता है। जांघ गोदाय में गोदना करने वाली बदनिन जाति की औरतें पैर के उपर जांघ तक गोदती हैं। जांघ पर लंबे झेला तथा टखने पर कड़ी, कांटा, पोर, झेला तथा घुटने पर भी झेला, बेंडा, दीवा आदि गोदाये जाते हैं।"[11]

पोरी गोदाय- "इसमें हाथ की कोहनी से लेकर हाथ तक गोदना गुदवाया जाता है। हाथ में बैगा स्त्रियों द्वारा सामान्यतः टिपका, चकमक, मछली कांटा, झेला गोदना गुदवाया जाता है।"[12]

पछाड़ी गोदाय- "इस तरह के गोदने में जांघों के आगे वाला भाग में गोदना गुदवाया जाता है। पछाड़ी गोदाय पिंडली तथा उसके ऊपर के भाग में होती है। इसमें भी झेला, टिपका, केंकड़ा, मछली कांटा आदि गोदने गुदवाये जाते हैं।"[13]

छाती गोदाय - "इसी तरह छाती के गोदने को बैगा स्त्रियां छाती गोदाय कहती हैं। छाती गोदाय बैगा स्त्रियां अपने विवाह के बाद अपनी सुविधा के हिसाब से गुदवाती हैं। बैगा स्त्रियां स्तनों को छोड़कर छाती पर टिपका, फूल आदि के गोदने बनवाती हैं।"[14]

निष्कर्ष

गोदनाकला न केवल देश बल्कि विदेशों में भी बहुत प्रचलन में है। हालांकि वर्तमान में इस कला का व्यवसायीकरण हो चुका है। गोदना अमिट परंपरागत संचार के रूप में बैगा समुदाय के लोगों में आजीवन संचरित होता रहता है। बैगा जनजाति की गोदना परंपराएं अमिट परंपरागत संचार के रूप में आज भी प्रासंगिक है लेकिन वर्तमान में बदलते सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक परिवेश के चलते बैगा जनजातीय समुदाय में गोदनाकला के प्रति पहले जैसा उत्साह नहीं है। आधुनिक जनमाध्यमों के प्रभाव एवं आधुनिकता के अधिकाधिक प्रयोग के चलते बैगा जनजाति में परंपरागत संचार की इस विधा का प्राकृतिक-सहज आकर्षण कम हो गया है। दरअसल बैगा समुदाय में प्रचलित गोदना परंपराएं परंपरागत संचार की अमूल्य सांस्कृतिक विरासत हैं। बैगाओं के संस्कारों के साथ ही यह परम्परा बैगा समुदाय की सांस्कृतिक अस्मिता से भी जुड़ी हुई हैं। यही कारण है कि बैगा जनजातीय समुदाय की गोदना परंपरा को सहेजना सही मायनों में बैगा समुदाय के संस्कारों तथा सांस्कृतिक अस्मिता को सहेजने जैसा होगा।

संदर्भ-

1. दुबे, डा. श्यामाचरण, (1993): मानव और संस्कृति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.-155
2. वही, पृ.162-163.
3. कुमार, जिनेश, (2015): परंपरागत माध्यमों का अद्भुत संसार, कम्यूनिकेशन टुडे (अंक 17, खण्ड 03), पृ.152-154
4. तिवारी, शिवकुमार और शर्मा, श्रीकांत, (1994): मध्यप्रदेश की जनजातियां: समाज एवं व्यवस्था, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृ. 125
5. शर्मा. ए. एन. (2013): भारतीय मानव विज्ञान, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद
6. वही, पृ. 70
7. प्रवृद्ध, अशोक, (2015): पहचान और अभिव्यक्ति की अनूठी कला गोदना, (आनलाइन) उपलब्ध- www.divyahimachal.com/पहचान-और-अभिव्यक्ति-की-..(19 अप्रैल, 2015)
8. त्रिवेदी, राजेश्वर, (2011): बैगा (संपा.), वन्या प्रकाशन आदिम जाति कल्याण विभाग, भोपाल, पृ. 51
9. त्रिवेदी, राजेश्वर, (2011): बैगा (संपा.), वन्या प्रकाशन आदिम जाति कल्याण विभाग, भोपाल, पृ. 49
10. वही, पृ. 51
11. वही, पृ. 52
12. वही, पृ. 52
13. वही, पृ. 52
14. वही, पृ. 53